International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 25-06-2023, Accepted: 10-07-2023, Published: 26-07-2023
Volume 9, Issue 4, 2023, Page No. 36-38

भक्तिकालीन–साहित्य के मानवीय मूल्य

डॉ. महेन्द्र सिंह मीना
सहायक आचार्य हिन्दी, राजकीय महाविद्यालय करौली, राजस्थान, भारत

सारांश
मानवीय जीवन को केन्द्र में रखकर लिखा गया भावपूर्ण रचनात्मक लेखन साहित्य है। मनुष्य जीवन को समग्रता से आत्मसात करने और प्रतिष्ठापित में भक्तिकालीन कवियों का कोई शानी नहीं। हिन्दी साहित्य की विधिवत शुरूआत करने वाले भक्त कवि ही थे। भक्ति साहित्य आद्यांत मनुष्यता के साथ खड़ा दिखाई देता है। भक्ति आन्दोलन के बांग्लाभाषी संत कवि चंडीदास के शब्दों में– 'सुनहु रे मानुष भाई। शाबार ऊपर मानुष सत्य, ताहार ऊपर नाहिं।' तुलसीदास के राम को सबसे अधिक 'मनुज' ही प्रिय हैं–'सब मम प्रिय, सब मम उपजाए। सबसे अधिक, मनुज मोहि भाए।' भक्तिकालीन काव्य/साहित्य सत्ता और समाज की परिधि पर खड़े उस आदमी को जगह देती है, जिसे कविता के सहारे की सबसे ज्यादा जरूरत हैं। कविता उस दीन–हीन मानव का सहारा है, जिसे हर जगह से दुत्कारा जाता है।

मूल शब्दः मानव मूल्य और मानवाधिकार, भारतीय साहित्य और भक्ति आन्दोलन, भक्त कवि, जाति–धर्म और नैतिकता

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कबीर का मूल्यांकन करते हुए हिन्दी साहित्य के इतिहास में लिखा है कि दृ"कबीर ने मनुष्यत्व की सामान्य भावना को आगे करके निम्न श्रेणी की जनता में आत्म गौरव का भाव जगाया।" (मैनजर पाण्डेय, पृ.सं.32) उक्त कथन केबल कबीर की कविता के ही संदर्भ में नहीं है, अपितु सम्पूर्ण भक्ति साहित्य के संदर्भ में लिया जा सकता है। "भक्ति साहित्य केवल कविता का आंदोलन नहीं था, अपितु वह अखिल भारतीय स्तर पर एक सांस्कृतिक आंदोलन भी था। इसलिए इस दौर की कविता आज भी जनता के जीवन में रची–बसी हुई है। वह परंपरा और संस्कृति का अहम दस्तावेज है। जब भी जनमानस के सामने कोई सवाल खड़ा होता है तो भक्तिकालीन कविता और कवि उसे रास्ता सुझाते हैं। भारत में विभिन्न जनांदोलनों को भक्त कवियों से शक्ति और प्रेरणा मिली है। जब महाराष्ट्र में दलितों ने वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह किया, तो मराठी कवि नामदेव, तुकाराम, एकनाथ को श्रद्धा के साथ याद किया गया। हिन्दी क्षेत्र का दलित आंदोलन रैदास और कबीर से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। पराधीनता से स्त्री मुक्ति का जो आंदोलन वर्तमान में चल रहा है उसने मीराबाई के जीवन और काव्य के विद्रोही स्वरों की पहचान की है।" (मैनजर पाण्डेय, पृ.सं.21) मानवाधिकारों की पृष्ठभूमि में भक्ति आंदोलन/साहित्य के मानवीय मूल्यों पर चर्चा करना युक्तिसंगत होगा।

शोध पत्र

मानवाधिकार राजनैतिक संदर्भ में एक आधुनिक अवधारणा है। यूरोपीय देशों में लोकतांत्रिक व्यवस्था की मांग मानवाधिकारों की स्थापना का प्रयास था। फ्रांस की राज्य क्रान्ति, का आदर्श वाक्य–'स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व' एक तरह से मानवाधिकारों का प्रथम घोषणा पत्र था। औपनिवेशिक देशों के स्वतंत्रता संग्राम प्रारम्भ में मानवीय अधिकारों यथा– नस्लभेद, गुलाम–प्रथा, रंगभेद की समाप्ति पर केन्द्रित थे। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भागीदारी करने के साथ बाबा साहेब भीमराव अंबेड़कर ने दलित मुक्ति आंदोलन चलाया। इससे पूर्व राजाराम मोहनराय, स्वामी विवेकानन्द, दयानन्द सरस्वती, श्रीमती ऐनीवेसेन्ट, गोपाल कृष्ण गोखले, महात्मा गॉधी आदि के समाज सुधार आंदोलनों में मानवाधिकारों को तरजीह दी गई।

साहित्य के क्षेत्र में रचना और रचनाकार कभी पुरानेपन के शिकार नहीं होते। जो सार्थक है, उपयोगी है, वही समकालीन है। इसलिए साहित्य, और साहित्य इतिहास के मूल्यांकन –पुनर्मूल्यांकन पर चर्चा अक्सर साहित्यालोचना में की जाती रही है। नये युगीन संदर्भों में उसकी की महत्ता स्थापित की जाती है; उसे वक्त की कसौटी पर परखा जाता है। भक्तिकालीन मानवीय मूल्य वर्तमान मानवाधिकारों की रूपरेखा प्रस्तुत करते नज़र आते हैं।

भक्ति और आध्यात्म के आवरण में भक्तियुगीन साहित्य रचा गया, किन्तु मानव मुक्ति का स्वप्न और समानता के प्रति पूर्ण निष्ठा इस दौर की कविता के केन्द्र में थी। इसलिए इस दौर का काव्य मुक्ति का काव्य है– जाति व्यवस्था से मुक्ति, वर्णाश्रम धर्म से मुक्ति, अन्ध–विश्वास, पाखंड और साम्प्रदायिक भेदभाव से मुक्ति। यहां तक की ईर्ष्या, क्रूरता, कामुकता, कपट, अहंकार, धार्मिक रूढ़िवाद आदि से भी मुक्ति, और 'मुक्ति' अकेले की नहीं, सम्पूर्ण जगत की। अपना हक न मांगकर मनुष्य हक की बात– 'मै तो सबहीं की कहौं।' समाज में मानवीय भावों और गुणों के प्रसार के लिए मनुष्य विरोधी भावों को हटाना जरूरी होता है। इसलिये भक्तियुगीन कविता लोकधर्म के रूप में प्रेम, दया, उदारता, अहिंसा और समानता पर बल देती है। निम्न जाति के प्रति हिंसक क्रूरता और वीभत्स कृत्यों के प्रति इस दौर की कविता आक्रोश से युक्त है –

"जाति–पांति के फेर में, उरझि रह्यों सब लोग
मनुष्यता को खात है, रविदास जात को रोग।।"
(रैदास रचनावली पृ.सं.137)

'का करौं जाति, का करौं पाती। राजा राम, सेउं दिन राती।'
नामदेव

साम्प्रदायिकता भारतीय समाज का कोढ़ है और मानवाधिकारों के रास्ते में बहुत बड़ा रोड़ा। मानवाधिकारों का मूल मकसद 'मनुष्य के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास' है। हम आये दिन साम्प्रदायिक दंगों से घिर जाते हैं; हम उसके लिए लड़ते–मरते है, जिसने हम सबको बनाया–

"हिन्दू कहे मोहि राम पियारा, तुरूक कहे रहिमाना।
आपस में दोउ लरि लरि मुए, मरम न काहू जाना।"
कबीर

इसलिए भक्त कवि सामंजस्य बिठाने का प्रयास करते हैं–

"अलह राम छूटा भ्रम मोरा।
हिंदू तुरक भेद कछु नाहीं, देखौ दरसन तेरा।।"

दादू

"हिंदू पूजै देहुरा, मुसलमाणु मसीता।
नामे सोई सेविया, जह देहुरा न मसीत।।"

नामदेव

कबीर तो इस झगड़े से तंग आकर घोषणा ही कर देते हैं– 'ना मैं हिंदू न मुसलमान।'
भक्तिकालीन कविता सतही तौर पर अलौकिक सर्वशक्तिमान सत्ता के प्रति भक्त का आत्मसमर्पण जान पड़ती है, परन्तु गहराई से विचार करने पर पाते हैं कि भक्तियुगीन कवि आत्म–मुक्ति की खोज में किसी कंदरा के अंदर अलख जगाने वाले जोगी, जती, सन्यासी नहीं थे अपितु सामाजिक सरोकारों से युक्त मनुष्य की स्वाधीनता और समानता के प्रति निष्ठावान 'सांचे सूरमा' थे–

"पराधीनता पाप है, जान लेहू रे मीत।
रविदास दास पराधीन सो, कौन करे है प्रीत।।"

रैदास

"कत विधि सृजी नारी जग माही, पराधीन सपनेहूं सुख नाहीं।।"

तुलसी

और मीरा! मीरा तो आज की स्वाधीन स्त्री को आईना दिखाती प्रतीत होती है। अलंकरण, शोभा और भोग में लिप्त, स्वतंत्रता का दंभ भरती आज की फैशनपरस्त स्त्री अपने आसपास सोने का पिंजरा लिए घूमते बाजार को देख ही नहीं रही, बल्कि अपने लिए कीमती और ज्यादा जड़ाऊ पिंजरा परख भी रही है किन्तु मीरा स्वाधीनता का नया आयाम खड़ा करती है–

"मेवाड़ी राणा, तूं तो कोई जाणै म्हारा घट की
सुसरा जी हट की काण न राखी, पट खोल्या घूंघट की।
गेहणू गांठो म्है तो सब तज दीन्हा म्हा तो पैली नटगी।।"

मीरा

गहनों की चमक और राजपाट का मोह भी मीरा को बांधे न रख सका। आजादी की इससे बड़ी लालसा और क्या होगी। स्वतंत्र व्यक्तित्व मानवाधिकारों का मूल तत्व है, जिसे भक्ति कालीन कविता सामने रखती है। भक्तिकाल का प्रेम भी जहां एक ओर आध्यात्मिक अनुभूति और समर्पण से युक्त है, वहीं दूसरी ओर सामाजिक, नैतिक और धार्मिक संदर्भों में वह विद्रोह की ओर अग्रसर है–

"लोक लाज कुल कानि जगत की, दइ बहाय जस पानी।
अपने घर का परदा करले, मै अबला बौरानी।।"

मीरा

यह प्रेम की शक्ति है जो मीरा को लोक लाज और कुल की मर्यादा का उल्लंघन करने के लिए प्रेरित करती है। प्रेम को आधार बनाकर मीरा अपनी कविता में सामंती समाज और संस्कृति की जकड़न से अपने को मुक्त करना चाहती है । मीरा स्त्री स्वाधीनता की सच्ची प्रतिनिधि है। वह आधुनिक स्त्री से भी ज्यादा आधुनिक और क्रान्तिकारी है। स्त्री स्वाधीनता का समूचा दर्शन है–मीरा का काव्य। यहा 'देश, काल, देह और मन' सभी पर आजादी का झंडा है –

"राजा बरजै, राणी बरजै, बरजै सब परिवारी'
कुंवर पाटवी सो भी बरजै, और सहेल्यां सारी
साधुन के ढ़िग बैठि बैठि के, लाज गमाई सारी
नित–प्रति उठि नीच घर जाओ, कुल को लगाओ गारी
लोकलाज कुल की मर्यादा, जामें एक ने राखुंगी।"

मीरा

इतने दबाव और प्रतिरोध में भी मीरा की आवाज बुलंद है। उसे दबाया नहीं जा सका, क्योंकि जिस प्रेम के रास्ते पर मीरा चल रही थी, वह मानवता का सच्चा मार्ग था; कपट का नहीं। इसलिए उसमें इतनी निड़रता भी है। जायसी के यहॉ प्रेम सबसे बडा मानवीय मूल्य है और मानव अस्तित्व का मूल उपादान भी, जिसके होने पर मानव धरती पर बैकुंठ का अनुभव प्राप्त करने में समर्थ है –

"मानुष प्रेम भयहु बैकुंठी, नाहि त काह छार भर मूंठी।"

जायसी

अलाउद्दीन खिलजी सर्वसम्पन्न, सर्वशक्तिशाली सम्राट है, उसके पास सब कुछ है, सिवाय प्रेम के। प्रेम के अभाव में सब व्यर्थ है

"छार उठाय लीन्ह एक मूंठी, दीन्ह उडाये पिरथिमी झूठी।"

जायसी

सूरदास की गोपियां उन्मुक्त प्रेम का सशक्त उदाहरण है। आत्मसमर्पण, अनन्यता, प्रगाढ़ता से युक्त प्रेम ने 'अहं' तत्व को पीछे छोड दिया। इस प्रेम ने मीरा की तरह लोक और वेद की मर्यादा का बांध भी बहा दिया है। स्वछंद समाज में स्वछंद प्रेम का चित्रण सूर ने किया है –

"अब यह दशा देखि निज नैननि, सब मरजाद ढही।"

सूरदास

सूर अपने समय में प्रचलित सतीप्रथा की अमानवीय त्रासदी का उल्लेख ही नहीं करते, अपितु उसकी भर्त्सना भी करते है –

"देखि जरनि, जड नारि की (रे) जरति प्रेम के संग।
चिता न चित फीको भणयों (रे) रची जु पिपय के रंग।
लोक वेद बरजत सवै (रे) देखत नैननि त्रास।"

सूरदास

आजीविका का अधिकार व्यक्ति का मूल अधिकार है, बगैर आजीविका के व्यक्ति या समाज टिका नहीं रह सकता। इसलिए श्रमपूर्वक आजीविका कमाने को भक्ति कवियों ने ईश्वर अराधना के समकक्ष रखा है–

"श्रम कोउ ईसर जानि कै, जउ पूजै दिन–रैन
रविदास तिन्हहिं संसार में, सदा मिलै सुख चौन।"

रैदास

तुलसीदास जी ने आजीविका (वर्तमान में बेरोजगारी) का जैसा चित्रण किया है, वह मानवाधिकारों के दायरे से बाहर नहीं है–

"खेती न किसान को भिखारी को न भीख
बलि वनिक को बनिज न, चाकर को चाकरी।"

तुलसी

पेट की खातिर बेटा–बेटी का विक्रय आज भी थमा नहीं है और मानवाधिकारों के नजरिये से मानव क्रय–विक्रय अपराध है पर इस अपराध पर भक्ति कवियों की भी नजर है–

"ऊंचे–नीचे करम, धरम–अधरम करि
पेट ही को पचत, बेचत बेटा–बेटकी
तुलसी बुझाई एक राम घनश्याम ही ते
आग बडबागि ते, बडी है, आग पेट की।"

तुलसी

सम्मान के साथ भोजन प्राप्त करना हर व्यक्ति का मौलिक हक है, सत्ता को चाहिए कि इस हक को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति की जेब भी समर्थ बनी रहे। पर ऐसा न होने पर भक्तकवि चुप नहीं होते–

"मनिमानिक महंगे किये, सहजे तृन–जल–नाज
तुलसी ऐसे मानिए राम गरीब नेवाज।"

तुलसी

"ऐसो चाहो राज मैं, मिले सभन को अन्न।
छोटे–बड़ों सब सम बसै, रविदास रहै प्रसन्न।"

रैदास

उपासना एक धार्मिक कृत्य है किन्तु हर व्यक्ति को उपासना की छूट देना, एक सामाजिक अधिकार है। आज भी दलितों, स्त्रियों और शूद्रों का मंदिर प्रवेश बहुत सी जगह वर्जित है। भक्तिकालीन भक्त कवि इस सवाल से टकराते हैं और अपने तईं उत्तर/समाधान खोजते हैं–

"रविदास जनम कारने, होत न कोऊ नीच ।
नर को नीच करि डारि है, ओछे करम को कीच।"

रैदास

"मेरी जाति पांति न चहौ, काहू की जाति पाति।"

तुलसी

"रविदास ब्राह्मण मत पूजिए, जो होवे गुण सो हीन
पूजिए चरण चण्डाल के, जो होवे गुण परवीन।"

रैदास

जाति बड़प्पन की जगह मानवीय गुणों की पूजा और अंतत उस ईश्वर का ही परित्याग जिसके प्रांगण में 'मानुष' का प्रवेश ही वर्जित हो –

"पाथर पूजै हरि मिलै, तो मैं पूजू पहार
ताते तो चाकी भली, पीस खाय संसार।"

कबीर

मर्म को न समझना और मिथ्या को सच मान लेना, उस युग की विड़म्बना थी और आज भी है। इसलिए कबीरदास को कहना पड़ा–'मन न रंगाय, रंगा जोगी कपड़ा।' या फिर "लोकामति का भौंरा रे। जो काशी तन तजै कबीरा, तो रामहि कौन निहौरा रे।" बार–बार भक्तियुगीन कवि सचेत करते है पर उनकी कोई सुने तो–

"जुगन–जुगन समझावत हारा, कहीं न मानत कोई रे।"
कबीर

निष्कर्ष

आज मानवाधिकारों को कानूनी मान्यता प्राप्त है और उनका उल्लंघन करने पर कानूनी कार्रवाई संभव है। पर मानवाधिकारों की वास्तव में पालना तब ही संभव होगी, जब हम मानवीय मूल्यों को समझने में सक्षम होंगे। इसके लिए कहना न होगा की मध्यकालीन भक्तिसाहित्य से बढ़कर और कोई सरस, श्रेष्ठ, प्रासंगिक स्रोत नहीं है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य – मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, चतुर्थ संस्करण, 2003 नई दिल्ली ।
2. रैदास रचनावली – गोविन्द रजनीश, अमरसत्य प्रकाशन, संस्करण 2009, नई दिल्ली
3. नामदेव रचनावली– गोविन्द रजनीश, अमरसत्य प्रकाशन, संस्करण 2009, नई दिल्ली
4. सन्त कवि दादू दृ सं. डॉ.बलदेव बंशी, आर्य प्रकाशन मंडल, संस्करण 2011, नई दिल्ली
5. सन्त मीरबाई और उनकी पदावली दृ सं. बलदेव वंशी, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली 2013
6. कवि परम्परा तुलसी से त्रिलोचन – प्रभाकर श्रोत्रिय, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली 2013